Chapter सात

राजा मान्धाता के वंशज

इस अध्याय में मान्धाता के वंशजों का वर्णन हुआ है और उसी प्रसंग में पुरुकुत्स तथा हरिश्चन्द्र की भी कथाएँ दी गई हैं।

मान्धाता का सबसे प्रसिद्ध पुत्र अम्बरीष था जिसका पुत्र यौवनाश्व हुआ और यौवनाश्व का पुत्र हारीत हुआ। ये तीनों पुरुष मान्धाता के वंश में सर्वश्रेष्ठ थे। मान्धाता के दूसरे पुत्र पुरुकुत्स ने सर्पगण की बहिन नर्मदा से विवाह किया। उसका पुत्र त्रसद्दस्यु हुआ जिसका पुत्र अनरण्य था। अनरण्य का पुत्र हर्यश्व हुआ और हर्यश्व का पुत्र प्रारुण था। प्रारुण का पुत्र त्रिबन्धन हुआ जिसका पुत्र सत्यव्रत हुआ जो त्रिशंकु भी कहलाता था। जब त्रिशंकु ने एक ब्राह्मणपुत्री का अपहरण किया तो उसके पिता ने इस पापकर्म के लिए उसे शाप दिया जिससे वह शूद्र से भी अधम एक चण्डाल बन गया। बाद में विश्वामित्र के प्रभाव से वह स्वर्ग लाया गया, किन्तु देवताओं के प्रभाव के कारण उसे पुन: नीचे गिरना पड़ा। तो भी विश्वामित्र ने उसे नीचे गिरते हुए बीच में ही रोक दिया। त्रिशंकु का पुत्र हरिश्चन्द्र था जिसने एक बार राजसूय यज्ञ किया, किन्तु विश्वामित्र ने चालाकी से उसकी सारी सम्पत्ति दक्षिणा में ले ली और उसे अनेक प्रकार से प्रताड़ित किया। इससे विश्वामित्र तथा वसिष्ठ में झगड़ा उठ खड़ा हुआ। हरिश्चन्द्र के कोई सन्तान न थी लेकिन नारद के कहने पर जब उसने वरुण की उपासना की तो उसके रोहित नाम का पुत्र उत्पन्न हुआ। हरिश्चन्द्र ने वचन दिया था कि वरुण यज्ञ के लिए रोहित की बलि दी जायेगी। वरुण ने हरिश्चन्द्र को इस यज्ञ के लिए बारम्बार स्मरण कराया, किन्तु पुत्र-स्नेह के कारण उसकी बलि देने से बचने के लिए वह बहाने बनाता रहा। इस तरह समय बीतता गया और उसका पुत्र धीरे-धीरे बड़ा हो गया। तब वह लड़का हाथ में धनुषबाण लेकर अपने जीवन की रक्षा करने के लिए जंगल चला गया। इसी बीच हरिश्चन्द्र को वरुण के आक्रमण के फलस्वरूप जलोदर हो गया। जब रोहित को अपने पिता की बीमारी का पता लगा तो वह राजधानी में वापस आना चाहता था, किन्तु इन्द्र ने ऐसा करने से मना कर दिया। इन्द्र के कहने से रोहित जंगल में छ: वर्षों तक रहा और फिर घर लौटा। उसने अजीगर्त के द्वितीय पुत्र शुन:शेफ को खरीदकर उसे अपने पिता को दे दिया जिससे उसकी पशु-बलि चढ़ सके। इस तरह यज्ञ सम्पन्न हुआ, वरुण तथा अन्य देवता शान्त

हुए और हरिश्चन्द्र रोगमुक्त हो गया। इस यज्ञ में विश्वामित्र होता पुरोहित थे, जमदग्नि अध्वर्यु थे, वसिष्ठ ब्रह्मा थे और अयास्य उद्गाता थे। इन्द्र ने इस यज्ञ से परम प्रसन्न होकरहरिश्चन्द्र को सुनहला रथ दिया और विश्वामित्र ने उसे दिव्य ज्ञान प्रदान किया। इस प्रकार शुकदेव गोस्वामी ने इसका वर्णन किया है कि हरिश्चन्द्र ने किस तरह सिद्धि प्राप्त की।

श्रीशुक उवाच
मान्धातुः पुत्रप्रवरो योऽम्बरीषः प्रकीर्तितः ।
पितामहेन प्रवृतो यौवनाश्वस्तु तत्सुतः ।
हारीतस्तस्य पुत्रोऽभून्मान्धातृप्रवरा इमे ॥ १ ॥

शब्दार्थ

श्री-शुकः उवाच—श्री शुकदेव गोस्वामी ने कहा; मान्धातुः—मान्धाता का; पुत्र-प्रवरः—प्रमुख पुत्र; यः—जो; अम्बरीषः—अम्बरीष; प्रकीर्तितः—विख्यात; पितामहेन—अपने बाबा युवनाश्व द्वारा; प्रवृतः—स्वीकृत; यौवनाश्वः—यौवनाश्व; तु—तथा; तत्-सुतः—अम्बरीष का पुत्र; हारीतः—हारीत; तस्य—यौवनाश्व का; पुत्रः—पुत्र; अभूत्—हुआ; मान्धातृ—मान्धाता के वंश में; प्रवराः—अत्यन्त प्रमुख; इमे—ये सभी।

शुकदेव गोस्वामी ने कहा : मान्धाता का सर्वप्रमुख पुत्र अम्बरीष नाम से विख्यात हुआ। अम्बरीष को उसके बाबा युवनाश्व ने पुत्र रूप में स्वीकार किया। अम्बरीष का पुत्र यौवनाश्व हुआ और यौवनाश्व का पुत्र हारीत था। मान्धाता के वंश में अम्बरीष, हारीत तथा यौवनाश्व अत्यन्त प्रमुख थे।

नर्मदा भ्रातृभिर्दत्ता पुरुकुत्साय योरगैः ।
तया रसातलं नीतो भुजगेन्द्रप्रयुक्तया ॥ २ ॥

शब्दार्थ

नर्मदा—नर्मदा नामक; भ्रातृभिः—अपने भाइयों से; दत्ता—दान में दी गई; पुरुकुत्साय—पुरुकुत्स को; या—जो; उरगैः—सर्पों (सर्पगण) द्वारा; तया—उसके द्वारा; रसातलम्—ब्रह्माण्ड के निम्न भागों को; नीतः—ले जाया गया; भुजग-इन्द्र-प्रयुक्तया—सर्पों के राजा वासुकि द्वारा लगाया गया।

नर्मदा के सर्प-भाइयों ने उसे पुरुकुत्स को दे दिया। वासुकि द्वारा भेजे जाने पर नर्मदा पुरुकुत्स को ब्रह्माण्ड के निम्न भाग (रसातल) में ले गई।

तात्पर्य : शुकदेव गोस्वामी मान्धाता के पुत्र पुरुकुत्स के वंशजों का वर्णन करने से पूर्व सर्वप्रथम यह बतलाते हैं कि पुरुकुत्स नर्मदा से किस तरह ब्याहा गया जिसे उसे रसातल ले जाने के लिए प्रेरित किया गया।

गन्धर्वानवधीत्तत्र वध्यान्वै विष्णुशक्तिधृक् ।
नागाल्लब्धवरः सर्पादभयं स्मरतामिदम् ॥ ३ ॥

शब्दार्थ

गन्धर्वान्—गन्धर्वलोक के निवासियों को; अवधीत्—मार डाला; तत्र—वहाँ (रसातल में); वध्यान्—वध करने के योग्य; वै—निस्सन्देह; विष्णु-शक्ति-धृक्—भगवान् विष्णु द्वारा शक्ति प्रदत्त; नागात्—नागों से; लब्ध-वरः—वर प्राप्त करके; सर्पात्—सर्पों से; अभयम्—आश्वासन; स्मरताम्—स्मरण करने वालों को; इदम्—यह घटना।

रसातल में भगवान् विष्णु द्वारा शक्ति प्रदान किये जाने के कारण पुरुकुत्स मारे जाने के योग्य सभी गन्धर्वों का वध करने में समर्थ हो गया। पुरुकुत्स को सर्पों से यह वर प्राप्त हुआ कि जो कोई नर्मदा द्वारा रसातल में उसके लाये जाने के इतिहास को स्मरण करेगा उसे सर्पों के आक्रमण से सुरक्षा प्रदान की जायेगी।

त्रसद्दस्युः पौरुकुत्सो योऽनरण्यस्य देहकृत् ।
हर्यश्वस्तत्सुतस्तस्मात्प्रारुणोऽथ त्रिबन्धनः ॥ ४ ॥

शब्दार्थ

त्रसद्दस्युः—त्रसद्दस्यु नामक; पौरुकुत्सः—पुरुकुत्स का पुत्र; यः—जो; अनरण्यस्य—अनरण्य का; देह-कृत्—पिता; हर्यश्वः—हर्यश्व; तत्-सुतः—अनरण्य का पुत्र; तस्मात्—उस (हर्यश्व) से; प्रारुणः—प्रारुण; अथ—तब, प्रारुण से; त्रिबन्धनः—उसका पुत्र त्रिबन्धन।

पुरुकुत्स का पुत्र त्रसद्दस्यु हुआ जो अनरण्य का पिता था। अनरण्य का पुत्र हर्यश्व हुआ जो प्रारुण का पिता बना। प्रारुण का पुत्र त्रिबन्धन हुआ।

तस्य सत्यव्रतः पुत्रस्त्रिशङ्कुरिति विश्रुतः ।
प्राप्तश्चाण्डालतां शापाद्गुरोः कौशिकतेजसा ॥ ५ ॥
सशरीरो गतः स्वर्गमद्यापि दिवि दृश्यते ।
पातितोऽवाक्शिरा देवैस्तेनैव स्तम्भितो बलात् ॥ ६ ॥

शब्दार्थ

तस्य—त्रिबन्धन का; सत्यव्रतः—सत्यव्रत; पुत्रः—पुत्र; त्रिशङ्कुः—त्रिशंकु; इति—इस प्रकार; विश्रुतः—विख्यात; प्राप्तः—प्राप्त किया था; चाण्डालताम्—चण्डाल के गुण, जो शूद्र से भी अधम होता है; शापात्—शाप से; गुरोः—अपने गुरु के; कौशिक-तेजसा—कौशिक (विश्वामित्र) की शक्ति से; सशरीरः—इस शरीर सहित; गतः—गया; स्वर्गम्—स्वर्गलोक को; अद्य अपि—आज भी; दिवि—आकाश में; दृश्यते—देखा जा सकता है; पातितः—गिराया जाकर; अवाक्-शिराः—सिर नीचे किये लटकता हुआ; देवैः—देवताओं की शक्ति से; तेन—विश्वामित्र द्वारा; एव—निस्सन्देह; स्तम्भितः—स्थिर; बलात्—बल से।

त्रिबन्धन का पुत्र सत्यव्रत था जो त्रिशंकु नाम से विख्यात है। चूँकि उसने विवाह-मण्डप से एक ब्राह्मणपुत्री का अपहरण कर लिया था इसलिए उसके पिता ने उसे चण्डाल बनने का शाप दे दिया जो शूद्र से भी नीचे होता है। तत्पश्चात् विश्वामित्र के प्रभाव से वह सदेह स्वर्गलोक गया, किन्तु

देवताओं के पराक्रम से वह पुन: नीचे गिर गया। तो भी विश्वामित्र की शक्ति से वह एकदम नीचे नहीं गिरा। आज भी वह आकाश में सिर के बल लटकता देखा जा सकता है।

त्रैशङ्कवो हरिश्चन्द्रो विश्वामित्रवसिष्ठयो: ।
यन्निमित्तमभूद्युद्धं पक्षिणोर्बहुवार्षिकम् ॥ ७॥

शब्दार्थ

त्रैशङ्कव:—त्रिशंकु का पुत्र; हरिश्चन्द्र:—हरिश्चन्द्र; विश्वामित्र-वसिष्ठयो:—विश्वामित्र तथा वसिष्ठ के मध्य; यत्-निमित्तम्—हरिश्चन्द्र को लेकर; अभूत्—हुआ; युद्धम्—भीषण लड़ाई; पक्षिणो:—दोनों पक्षी के रूप में बदल दिये गये थे; बहु-वार्षिकम्—अनेक वर्षों तक।

त्रिशंकु का पुत्र हरिश्चन्द्र हुआ। हरिश्चन्द्र को लेकर विश्वामित्र तथा वसिष्ठ में युद्ध हुआ। वे दोनों पक्षी के रूप में बदले जाकर वर्षों तक लड़ते रहे।

तात्पर्य : विश्वामित्र तथा वसिष्ठ सदा एक दूसरे के शत्रु बने रहे। पहले विश्वामित्र क्षत्रिय थे और अपनी कठोर तपस्या द्वारा ब्राह्मण बनना चाहते थे, किन्तु वसिष्ठ उसे स्वीकार नहीं करना चाहते थे। इस तरह दोनों में नित्य विरोध उत्पन्न होता रहा। किन्तु बाद में विश्वामित्र के क्षमा माँगने पर वसिष्ठ ने उसे स्वीकार कर लिया। एक बार हरिश्चन्द्र ने एक यज्ञ किया जिसके पुरोहित विश्वामित्र बने। किन्तु अप्रसन्न होने के कारण विश्वामित्र ने हरिश्चन्द्र की सारी सम्पत्ति दक्षिणा के रूप में माँग ली। यह वसिष्ठ को अच्छा नहीं लगा अतएव वसिष्ठ तथा विश्वामित्र में युद्ध हुआ। इस घोर युद्ध में उन्होंने एक दूसरे को शाप दे डाला। एक ने कहा ''तुम पक्षी बन जाओ'' और दूसरे ने कहा ''तुम बत्तख बन जाओ।'' इस तरह दोनों पक्षी बनकर वर्षों तक हरिश्चन्द्र के कारण लड़ते रहे। हम देखते हैं कि सौभरि जैसा महान् योगी काम-वासना का शिकार बना और वसिष्ठ तथा विश्वामित्र जैसे महर्षि पक्षी बने। यही तो भौतिक संसार है। *आब्रह्म भुवनाल्लोका: पुनरावर्तिनोऽर्जुन।* इस भौतिक जगत में या इस ब्रह्माण्ड में कोई भौतिक गुणों में कितना ही महान् क्यों न हो उसे जन्म, मृत्यु, जरा तथा रोग सहने पड़ते हैं (*जन्ममृत्युजराव्याधि*)। इसीलिए कृष्ण कहते हैं कि यह संसार मात्र कष्टमय है (*दु:खालयमशाश्वतम्*)। *भागवत* का कथन है— *पदं पदं यद्विपदाम्*—यहाँ प्रत्येक पग पर संकट है। अतएव कृष्णभावनामृत आन्दोलन मनुष्य को हरे कृष्ण मंत्र के कीर्तन मात्र से इस भौतिक जगत से बाहर निकलने का अवसर प्रदान करने के कारण मानव समाज के लिए सर्वोच्च वर है।

सोऽनपत्यो विषण्णात्मा नारदस्योपदेशतः ।
वरुणं शरणं यातः पुत्रो मे जायतां प्रभो ॥ ८ ॥

शब्दार्थ

सः—वह; अनपत्यः—सन्तानहीन; विषण्ण-आत्मा—अत्यन्त खिन्न; नारदस्य—नारद के; उपदेशतः—उपदेश से; वरुणम्—वरुण की; शरणम् यातः—शरण में गया; पुत्रः—पुत्र; मे—मेरे; जायताम्—उत्पन्न हो; प्रभो—हे प्रभु।

हरिश्चन्द्र के कोई पुत्र न था; अतएव वह अत्यन्त खिन्न रहता था। अतएव एक बार नारद मुनि के उपदेश से उसने वरुण की शरण ग्रहण की और उनसे कहा ''हे प्रभु, मेरे कोई पुत्र नहीं है। क्या आप मुझे एक पुत्र दे सकेंगे?''

यदि वीरो महाराज तेनैव त्वां यजे इति ।
तथेति वरुणेनास्य पुत्रो जातस्तु रोहितः ॥ ९ ॥

शब्दार्थ

यदि—यदि; वीरः—पुत्र होगा; महाराज—हे महाराज परीक्षित; तेन एव—उस पुत्र से भी; त्वाम्—तुमको; यजे—मैं यज्ञ करूँगा; इति—इस प्रकार; तथा—जैसी तुम्हारी इच्छा; इति—इस प्रकार स्वीकार किया गया; वरुणेन—वरुण द्वारा; अस्य—महाराज हरिश्चन्द्र का; पुत्रः—पुत्र; जातः—उत्पन्न हुआ; तु—निस्सन्देह; रोहितः—रोहित नामक।

हे राजा परीक्षित, हरिश्चन्द्र ने वरुण से याचना की, ''हे प्रभु, यदि मेरे पुत्र उत्पन्न होगा तो मैं आपकी तुष्टि के लिए उसी से एक यज्ञ करूँगा।'' जब हरिश्चन्द्र ने यह कहा तो वरुण ने उत्तर दिया ''एवमस्तु,'' वरुण के आशीर्वाद से हरिश्चन्द्र के रोहित नाम का पुत्र हुआ।

जातः सुतो ह्यनेनाङ्ग मां यजस्वेति सोऽब्रवीत् ।
यदा पशुर्निर्दशः स्यादथ मेध्यो भवेदिति ॥ १० ॥

शब्दार्थ

जातः—उत्पन्न हो गया; सुतः—पुत्र; हि—निस्सन्देह; अनेन—इस पुत्र से; अङ्ग—हे हरिश्चन्द्र; माम्—मुझको; यजस्व—यज्ञ करना; इति—इस प्रकार; सः—वह (वरुण); अब्रवीत्—कहा; यदा—जब; पशुः—पशु; निर्दशः—दस दिन बीतें; स्यात्—हो जाये; अथ—तब; मेध्यः—यज्ञ में भेंट करने योग्य; भवेत्—हो जाये; इति—इस प्रकार (हरिश्चन्द्र ने कहा)।

अतः, जब पुत्र उत्पन्न हो गया तो वरुण ने हरिश्चन्द्र के पास आकर कहा ''अब तुम्हारे पुत्र हो गया है। तुम इस पुत्र से मेरा यज्ञ कर सकते हो।'' इसके उत्तर में हरिश्चन्द्र ने कहा ''पशु अपने जन्म के दस दिन बाद ही यज्ञ (बलि दिये जाने) के योग्य होता है।''

निर्दशे च स आगत्य यजस्वेत्याह सोऽब्रवीत् ।
दन्ताः पशोर्यज्जायेरन्नथ मेध्यो भवेदिति ॥ ११ ॥

शब्दार्थ

निर्दशे—दस दिन बाद; च—भी; सः—वह, वरुण; आगत्य—यहाँ आकर; यजस्व—अब यज्ञ करो; इति—इस प्रकार; आह—कहा; सः—उसने, हरिश्चन्द्र ने; अब्रवीत्—उत्तर दिया; दन्ताः—दाँत; पशोः—पशु के; यत्—जब; जायेरन्—प्रकट हो जाएँ; अथ—तब; मेध्यः—बलि देने के योग्य; भवेत्—हो जायेगा; इति—इस प्रकार।

दस दिन बाद वरुण पुनः आया और हरिश्चन्द्र से कहा ''अब तुम यज्ञ कर सकते हो।'' हरिश्चन्द्र ने उत्तर दिया, ''जब पशु के दाँत आ जाते हैं तो वह बलि देने के योग्य शुद्ध बनता है।''

दन्ता जाता यजस्वेति स प्रत्याहाथ सोऽब्रवीत् ।
यदा पतन्त्यस्य दन्ता अथ मेध्यो भवेदिति ॥ १२॥

शब्दार्थ

दन्ताः—दाँत; जाताः—उग आये; यजस्व—अब बलि दो; इति—इस प्रकार; सः—वह वरुण; प्रत्याह—बोला; अथ—तत्पश्चात्; सः—उसने, हरिश्चन्द्र ने; अब्रवीत्—उत्तर दिया; यदा—जब; पतन्ति—गिरते हैं; अस्य—उसके; दन्ताः—दाँत; अथ—तब; मेध्यः—बलि के योग्य; भवेत्—हो जायेगा; इति—इस प्रकार।

जब दाँत उग आये तो वरुण ने आकर हरिश्चन्द्र से कहा, ''अब पशु के दाँत उग आये हैं। तुम यज्ञ कर सकते हो।'' हरिश्चन्द्र ने उत्तर दिया, ''जब इसके सारे दाँत गिर जायेंगे तो यह बलि के योग्य हो जायेगा।''

पशोर्निपतिता दन्ता यजस्वेत्याह सोऽब्रवीत् ।
यदा पशोः पुनर्दन्ता जायन्तेऽथ पशुः शुचिः ॥ १३॥

शब्दार्थ

पशोः—पशु के; निपतिताः—गिर चुके हैं; दन्ताः—दाँत; यजस्व—अब यज्ञ करो; इति—इस प्रकार; आह—कहा; सः—उसने, हरिश्चन्द्र ने; अब्रवीत्—उत्तर दिया; यदा—जब; पशोः—पशु के; पुनः—फिर; दन्ताः—दाँत; जायन्ते—उगते हैं; अथ—तब; पशुः—पशु; शुचिः—बलि देने के लिए पवित्र होता है।

जब दाँत गिर चुके तो वरुण फिर आया और हरिश्चन्द्र से बोला ''अब पशु के दाँत गिर चुके हैं और तुम यज्ञ कर सकते हो।'' किन्तु हरिश्चन्द्र ने उत्तर दिया, ''जब पशु के दाँत फिर से उग आयेंगे तो वह बलि देने के लिए अत्यन्त शुद्ध होगा।''

पुनर्जाता यजस्वेति स प्रत्याहाथ सोऽब्रवीत् ।
सान्नाहिको यदा राजन्राजन्योऽथ पशुः शुचिः ॥ १४॥

शब्दार्थ

पुनः—फिर से; जाताः—उग आये हैं; यजस्व—बलि चढ़ाओ; इति—इस प्रकार; सः—उसने, वरुण ने; प्रत्याह—उत्तर दिया; अथ—तत्पश्चात्; सः—वह, हरिश्चन्द्र; अब्रवीत्—बोला; सान्नाहिकः—ढाल से अपने को सजाने में समर्थ; यदा—जब; राजन्—हे राजा वरुण; राजन्यः—क्षत्रिय; अथ—तब; पशुः—बलि पशु; शुचिः—पवित्र हो जाता है।

जब दाँत फिर से उग आये तो वरुण फिर आया और हरिश्चन्द्र से बोला, ''अब तुम यज्ञ कर सकते हो।'' किन्तु तब हरिश्चन्द्र ने कहा, ''हे राजा, जब बलि का पशु क्षत्रिय बन जाता है और वह अपने शत्रु से अपनी रक्षा करने में समर्थ हो जाता है, तभी वह शुद्ध बनेगा।''

इति पुत्रानुरागेण स्नेहयन्त्रितचेतसा ।
कालं वञ्चयता तं तमुक्तो देवस्तमैक्षत ॥ १५ ॥

शब्दार्थ

इति—इस प्रकार; पुत्र-अनुरागेण—अपने पुत्र-स्नेह के कारण; स्नेह-यन्त्रित-चेतसा—मन ऐसे स्नेह के वशीभूत होकर; कालम्—समय को; वञ्चयता—ठगते हुए; तम्—उसको; तम्—वह; उक्तः—कहा; देवः—वरुण देव; तम्—उसको, हरिश्चन्द्र को; ऐक्षत—अपना वचन पालन किये जाने की प्रतीक्षा करता रहा।

हरिश्चन्द्र अपने पुत्र के प्रति अत्यधिक अनुरक्त था। इस स्नेह के कारण उसने वरुण देव से प्रतीक्षा करने के लिए कहा। इस तरह वरुण समय आने की प्रतीक्षा करता रहा।

रोहितस्तदभिज्ञाय पितुः कर्म चिकीर्षितम् ।
प्राणप्रेप्सुर्धनुष्पाणिररण्यं प्रत्यपद्यत ॥ १६ ॥

शब्दार्थ

रोहितः—हरिश्चन्द्र का पुत्र; तत्—यह तथ्य; अभिज्ञाय—ठीक से समझकर; पितुः—पिता का; कर्म—काम; चिकीर्षितम्—जिसे वह व्यावहारिक रूप से कर रहा था; प्राण-प्रेप्सुः—जीवन बचाने की इच्छा से; धनुः-पाणिः—अपना धनुष बाण लेते हुए; अरण्यम्—जंगल; प्रत्यपद्यत—चला गया।

रोहित समझ गया कि उसके पिता उसे बलि का पशु बनाना चाहते हैं। अतएव मृत्यु से बचने के लिए उसने धनुष-बाण से अपने आपको सज्जित किया और वह जंगल में चला गया।

पितरं वरुणग्रस्तं श्रुत्वा जातमहोदरम् ।
रोहितो ग्राममेयाय तमिन्द्रः प्रत्यषेधत ॥ १७ ॥

शब्दार्थ

पितरम्—अपने पिता के विषय में; वरुण-ग्रस्तम्—वरुण द्वारा जलोदर रोग से आक्रमण किया गया; श्रुत्वा—सुनकर; जात—बढ़ गया था; महा-उदरम्—फूला पेट; रोहितः—उसके पुत्र रोहित ने; ग्रामम् एयाय—राजधानी आना चाहता था; तम्—उसको; इन्द्रः—राजा इन्द्र ने; प्रत्यषेधत—वहाँ जाने से मना कर दिया।

जब रोहित ने सुना कि वरुण के कारण उसके पिता को जलोदर रोग हो गया है और उसका पेट फूल गया है तो वह राजधानी लौट आना चाहता था लेकिन राजा इन्द्र ने ऐसा करने से उसे मना कर दिया।

भूमेः पर्यटनं पुण्यं तीर्थक्षेत्रनिषेवणैः ।
रोहितायादिशच्छक्रः सोऽप्यरण्येऽवसत्समाम् ॥ १८ ॥

शब्दार्थ

भूमेः—संसार भर का; पर्यटनम्—भ्रमण; पुण्यम्—पवित्र स्थानों को; तीर्थ-क्षेत्र—तीर्थ स्थल; निषेवणैः—ऐसे स्थानों में सेवा करने या आने जाने से; रोहिताय—रोहित को; आदिशत्—आज्ञा दी; शक्रः—इन्द्र ने; सः—वह, रोहित; अपि—भी; अरण्ये—जंगल में; अवसत्—रहता रहा; समाम्—एक वर्ष तक।

राजा इन्द्र ने रोहित को सलाह दी कि वह विभिन्न तीर्थस्थानों तथा पवित्र स्थलों की यात्रा करे क्योंकि ऐसे कार्य पवित्र होते हैं। इस आदेश का पालन करते हुए रोहित एक वर्ष के लिए जंगल में चला गया।

एवं द्वितीये तृतीये चतुर्थे पञ्चमे तथा ।
अभ्येत्याभ्येत्य स्थविरो विप्रो भूत्वाह वृत्रहा ॥ १९ ॥

शब्दार्थ

एवम्—इस प्रकार; द्वितीये—दूसरे वर्ष; तृतीये—तीसरे वर्ष; चतुर्थे—चौथे वर्ष; पञ्चमे—पाँचवें वर्ष; तथा—और; अभ्येत्य—उसके सामने आकर; अभ्येत्य—फिर से उसके सामने आकर; स्थविरः—अत्यन्त वृद्ध पुरुष; विप्रः—ब्राह्मण; भूत्वा—बनकर; आह—कहा; वृत्र-हा—इन्द्र ने।

इस तरह द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ तथा पंचम वर्षों के अन्त में जब-जब रोहित अपनी राजधानी लौटना चाहता तो इन्द्र एक वृद्ध ब्राह्मण के वेश में उसके पास पहुँचता और वापस जाने के लिए उसे मना करता। वह गत वर्ष जैसे ही शब्दों को फिर से दुहराता।

षष्ठं संवत्सरं तत्र चरित्वा रोहितः पुरीम् ।
उपव्रजन्नजीगर्तादक्रीणान्मध्यमं सुतम् ।
शुनःशेफं पशुं पित्रे प्रदाय समवन्दत ॥ २० ॥

शब्दार्थ

षष्ठम्—छठवें; संवत्सरम्—वर्ष; तत्र—उस जंगल में; चरित्वा—घूमकर; रोहितः—हरिश्चन्द्र का पुत्र; पुरीम्—अपनी राजधानी में; उपव्रजन्—वहाँ जाकर; अजीगर्तात्—अजीगर्त से; अक्रीणात्—मोल लिया; मध्यमम्—दूसरा; सुतम्—पुत्र; शुनःशेफम्—जिसका नाम शुनःशेफ था; पशुम्—बलि-पशु के रूप में; पित्रे—अपने पिता को; प्रदाय—देते हुए; समवन्दत—सादर नमस्कार किया।

तत्पश्चात् छठे वर्ष जंगल में घूमने के बाद रोहित अपने पिता की राजधानी में लौट आया। उसने अजीगर्त से उसके दूसरे पुत्र शुनःशेफ को मोल लिया। फिर उसे लाकर अपने पिता हरिश्चन्द्र को भेंट किया जिससे वह बलि-पशु के रूप में प्रयुक्त किया जा सके। उसने हरिश्चन्द्र को सादर नमस्कार

किया।

तात्पर्य : ऐसा प्रतीत होता है कि उन दिनों मनुष्य को किसी भी कार्य के लिए खरीदा जा सकता था। हरिश्चन्द्र को ऐसे व्यक्ति की खोज थी जिसकी बलि यज्ञ में पशु के रूप में दी जा सके और इस तरह वरुण को दिया गया वचन पूरा किया जा सके। इसके लिए किसी अन्य व्यक्ति से एक मनुष्य खरीदा गया। लाखों वर्ष पूर्व पशु-बलि तथा दास-व्यापार दोनों प्रचलित थे। वास्तव में ये अनन्त काल से चले आ रहे हैं।

ततः पुरुषमेधेन हरिश्चन्द्रो महायशाः ।
मुक्तोदरोऽयजद्देवान्वरुणादीन्महत्कथः ॥ २१ ॥

शब्दार्थ

ततः—तत्पश्चात्; पुरुष-मेधेन—यज्ञ में मनुष्य की बलि देने से; हरिश्चन्द्रः—राजा हरिश्चन्द्र; महा-यशाः—अत्यन्त विख्यात; मुक्त-उदरः—जलोदर रोग से मुक्त हो गया; अयजत्—यज्ञ किया; देवान्—देवताओं को; वरुण-आदीन्—वरुण तथा अन्यों को; महत्-कथः—अन्य महापुरुषों के साथ इतिहास प्रसिद्ध।

तत्पश्चात् इतिहास के महापुरुष एवं सुप्रसिद्ध राजा हरिश्चन्द्र ने एक मनुष्य की बलि देकर महान् यज्ञ सम्पन्न किया और सारे देवताओं को प्रसन्न किया। इस प्रकार वरुण द्वारा उत्पन्न किया गया उसका जलोदर रोग जाता रहा।

विश्वामित्रोऽभवत्तस्मिन्होता चाध्वर्युरात्मवान् ।
जमदग्निरभूद्ब्रह्मा वसिष्ठोऽयास्यः सामगः ॥ २२ ॥

शब्दार्थ

विश्वामित्रः—ऋषि तथा योगी विश्वामित्र; अभवत्—बना; तस्मिन्—उस महान् यज्ञ में; होता—आहुति डालने वाला मुख्य पुरोहित; च—भी; अध्वर्युः—यजुर्वेद से स्तोत्र गाने वाला तथा कर्मकाण्ड कराने वाला व्यक्ति; आत्मवान्—पूर्णतया स्वरूपसिद्ध; जमदग्निः—जमदग्नि; अभूत्—बना; ब्रह्मा—मुख्य ब्राह्मण के रूप में; वसिष्ठः—एक मुनि; अयास्यः—अयास्य मुनि; साम-गः—सामवेद मंत्रों को गाने में लगा हुआ।

उस पुरुषमेध यज्ञ में विश्वामित्र होता थे, आत्मवान जमदग्नि अध्वर्यु थे, वसिष्ठ ब्रह्मा थे और अयास्य मुनि साम-गायक थे।

तस्मै तुष्टो ददाविन्द्रः शातकौम्भमयं रथम् ।
शुनःशेफस्य माहात्म्यमुपरिष्टात्प्रचक्ष्यते ॥ २३ ॥

शब्दार्थ

तस्मै—राजा हरिश्चन्द्र को; तुष्टः—अत्यन्त प्रसन्न होकर; ददौ—प्रदान किया; इन्द्रः—इन्द्र ने; शातकौम्भ-मयम्—स्वर्णनिर्मित; रथम्—रथ; शुनःशेफस्य—शुनःशेफ का; माहात्म्यम्—ख्याति; उपरिष्टात्—विश्वामित्र के पुत्रों का वर्णन करते समय; प्रचक्ष्यते—वर्णन किया जायेगा।

हरिश्चन्द्र से अत्यन्त प्रसन्न होकर राजा इन्द्र ने उसे सोने का रथ दान में दिया। शुनःशेफ की महिमाओं का वर्णन विश्वामित्र के पुत्र के वर्णन के साथ-साथ प्रस्तुत किया जायेगा।

सत्यं सारं धृतिं दृष्ट्वा सभार्यस्य च भूपतेः ।
विश्वामित्रो भृशं प्रीतो ददावविहतां गतिम् ॥ २४॥

शब्दार्थ

सत्यम्—सत्य; सारम्—दृढ़ता; धृतिम्—सहनशीलता; दृष्ट्वा—देखकर; स-भार्यस्य—अपनी पत्नी सहित; च—तथा; भूपतेः—महाराज हरिश्चन्द्र का; विश्वामित्रः—मुनि विश्वामित्र; भृशम्—अत्यधिक; प्रीतः—प्रसन्न होकर; ददौ—उसे दिया; अविहताम् गतिम्—अक्षय ज्ञान।

विश्वामित्र ने देखा कि महाराज हरिश्चन्द्र अपनी पत्नी सहित सत्यप्रिय, सहिष्णु तथा दृढ़ था। इस तरह उन्होंने मानव उद्देश्य की पूर्ति के लिए उन्हें अक्षय ज्ञान प्रदान किया।

मनः पृथिव्यां तामद्भिस्तेजसापोऽनिलेन तत् ।
खे वायुं धारयंस्तच्च भूतादौ तं महात्मनि ।
तस्मिञ्ज्ञानकलां ध्यात्वा तयाज्ञानं विनिर्दहन् ॥ २५॥
हित्वा तां स्वेन भावेन निर्वाणसुखसंविदा ।
अनिर्देश्याप्रतर्क्येण तस्थौ विध्वस्तबन्धनः ॥ २६॥

शब्दार्थ

मनः—मन (जो खाने, सोने, मैथुन करने तथा रक्षा करने की इच्छाओं से पूर्ण रहता है); पृथिव्याम्—पृथ्वी में; ताम्—उस; अद्भिः—जल से; तेजसा—तथा अग्नि से; अपः—जल; अनिलेन—अग्नि से; तत्—उस; खे—आकाश में; वायुम्—हवा; धारयन्—मिलाकर; तत्—वह; च—भी; भूत-आदौ—मिथ्या अहंकार में, जो संसार का उद्गम है; तम्—उस (मिथ्या अहंकार); महा-आत्मनि—महत् तत्त्व में; तस्मिन्—समग्र भौतिक शक्ति (महत्-तत्त्व) में; ज्ञान-कलाम्—आध्यात्मिक ज्ञान तथा इसकी विभिन्न शाखाएँ; ध्यात्वा—ध्यान द्वारा; तया—इस विधि से; अज्ञानम्—अज्ञान को; विनिर्दहन्—विशेष रूप से दमित; हित्वा—त्यागकर; ताम्—भौतिक इच्छा को; स्वेन—आत्म-साक्षात्कार के द्वारा; भावेन—भक्ति में; निर्वाण-सुख-संविदा—संसार का अन्त करके दिव्य आनन्द द्वारा; अनिर्देश्य—अवर्णनीय; अप्रतर्क्येण—अचिन्त्य; तस्थौ—रहता रहा; विध्वस्त—पूर्णतया मुक्त; बन्धनः—भौतिक बन्धन से।

इस प्रकार महाराज हरिश्चन्द्र ने पहले भौतिक भोग से पूर्ण अपने मन को पृथ्वी के साथ मिलाकर शुद्ध किया। तब उसने पृथ्वी को जल के साथ, जल को अग्नि के साथ, अग्नि को वायु के साथ तथा वायु को आकाश के साथ मिला दिया। तत्पश्चात् उसने आकाश को महत्-तत्त्व से और महत्-तत्त्व को आध्यात्मिक ज्ञान से मिला दिया। यह आध्यात्मिक ज्ञान अपने आपको भगवान् के अंश रूप में अनुभव करना है। जब स्वरूपसिद्ध जीव भगवान् की सेवा में लगता है तो वह नित्य रूप से

अवर्णनीय तथा अचिन्त्य होता है। इस प्रकार आध्यात्मिक ज्ञान प्राप्त हो जाने पर वह भव-बन्धन से पूर्णतः मुक्त हो जाता है।

इस प्रकार *श्रीमद्भागवत* के नवम स्कन्ध के अन्तर्गत ''राजा मान्धाता के वंशज'' नामक सातवें अध्याय के भक्तिवेदान्त तात्पर्य पूर्ण हुए।